प्रेम

-उन्नति कुमारी

जिससे रूह का मंजर था देखा मैंने
साथ चला कहा गया खुद पता नहीं अपनी पेशानी पर एक बल देखा मैंने।

स्त्री शक्ति का स्मरण रहा
जगत जननी कहलाने वाली
धरा जैसी मानवता जिसमें
निश्चल भाव प्रबल रहता था
रात सी धूमिल चादर पर
एक साँस मुखर रहता है
यहीं आइने से झाँकता स्त्री शक्ति का दर्पण देखा था मैंने।

कहाँ गयी वह कलरव करती
माँ के मुख की लोरी प्यारी
कहाँ गयी वह सहिष्णुता
जिसके आगे गगन था झुकता
पर्स समेटे बाल बिखराये
भाग रही थी आगे-आगे
उसका छोटे बच्चों-सा
करुण रुदन देखा था मैंने
जिस्म से रूह के साथ गजब मिलन देखा था मैंने।